ॐ श्रीवीतरागाय नमः

सप्तभङ्गी नय

ह जैन शास्त्रों का बड़ा प्रसिद्ध और गौरवशाली नय है। जैनशास्त्रज्ञ इसी के द्वारा समस्त संसारकी चेतन और अचेतन वस्तुओंका निर्णय करते है। जैनधर्म के नवतत्त्वों का अर्थात जीव–अजीव–पाप–पुण्य-आस्रव–बन्ध–संवर-निर्जरा और मोक्ष का अधिगम (ज्ञान), प्रमाण और नय द्वारा होता है। जिससे तत्त्वों का सम्पूर्ण रूपसे ज्ञान हो, वह प्रमाणात्मक अधिगम है और जिसके द्वारा इनके केवल एक देशका ज्ञान हो, वह नयात्मक अधिगम है। ये दोनो भेद सप्तभङ्गीनयमें विधि और निषेधकी प्रधानता मे होते हैं। इस लिए यह 'नयप्र-माणसप्तभङ्गी' और 'नयसप्तभङ्गी' दोनो कहलाता है।

सप्तभङ्गी नयका अर्थ ऐसा नय है जिसमें सात भङ्ग (वाक्य) हों, अर्थात् "सप्तानां भङ्गानां वाक्यानां समाहारः समूहः सप्तभङ्गी"। एक वस्तुमें अनेक धर्म रहते है। वे एक दूसरे के विरुद्ध नहीं होते है। इन अविरुद्ध नाना धर्मों का निश्चय ज्ञान सप्त-भङ्गी नय के सात वाक्यों द्वारा ही होता है। अतएव सप्तभङ्गी वह नय है जो सात वाक्यों द्वारा किसी वस्तु के परस्पर अविरुद्ध अनेक धर्मों का निश्चय ज्ञान उत्पन्न करे। यदि कोई कहे कि इस नयके सप्त वाक्य ही क्यों है, अधिक वा न्यून क्यों नहीं, तो उत्तर यह है कि जिज्ञासुको किसी वस्तुके निश्चय करने में सात संशयोंसे अधिक नहीं होसकते हैं। इस लिए यह नय उन सब संशयो का निवारक है। जैनशास्त्रों के प्रसिद्ध अनेकान्तवादका आधार इसी नय पर है। इसके समझे विना अनेकान्तवादके महत्त्व का पूर्ण ज्ञान नहीं होसकता है।

इस नय के सात भङ्ग (वाक्य) यह हैं:—

१—स्यादस्ति घटः—शायद घट है।

२—स्यान्नास्ति घटः—शायद घट नहीं है।

३—स्यादस्ति नास्ति च घटः—शायद घट है और नहीं भी है।

४—स्यादवक्तव्यो घटः—शायद घट अवक्तव्य है, अर्थात् ऐसा है जिसके विषय में कुछ कह ही नहीं सकते हैं।

५—स्यादस्ति चावक्तव्यश्च घटः—शायद घट है, और अव्यक्त भी है।

६—स्यान्नास्ति चावक्तव्यश्च घटः—शायद घट नहीं है और अवक्तव्य भी है।

७—स्यादस्ति नास्ति चावक्तव्यश्च घटः—शायद घट है, नहीं भी है और अवक्तव्य भी है।

इनमें से प्रत्येक भङ्ग का सविस्तार विवरण करने के पहले यह अत्यावश्यक है कि इनके समझने में

जिन जिन बातों की आवश्यकता है उनका भी थोड़ा हाल दे दिया जाय। वे बातें ये हैं:—

१–इन भङ्गों में 'स्याद' शब्द जो आया है उस का अर्थ।

२–इन भङ्गों में 'अस्ति' शब्द जो आया है और जिससे वस्तु में धर्मों की स्थिति बताई है उसका गूढाशय, अर्थात यह कि वस्तु में धर्मों की स्थिति किस प्रकार होती है।

३–इन भङ्गों में जो घट वस्तु दी है उसके रूप क्या हैं। उसका निजरूप क्या है और पररूप क्या है। द्रव्यरूप क्या है और पर्य्यायरूप क्या है इनका खुलासा यह है:—

१–'स्याद' शब्द अनेकान्तरूप अर्थबोधक है। इसके प्रयोग करने से यह अभिप्राय है कि वाक्य में निश्चयरूपी एक अर्थ ही नहीं समझा जाय, बल्कि उसमें जो दूसरे अंश मिले हुए हैं उनकी तरफ भी दृष्टि पड़े।

२-'अस्ति' शब्द से वस्तु में धर्मों की स्थिति सूचित होती है। यह स्थिति अभेदरूप आठ प्रकार से होसकती है, अर्थात् १ काल, २ आत्मरूप, ३ अर्थ, ४ सम्बन्ध, ५ उपकार, ६ गुणि देश, ७ संसर्ग, और शब्द।

इनसे कैसे स्थिति होती है इसका थोड़ा सा विवरण नीचे लिखते हैं।

१ काल।

घट में जिस काल में 'आस्तित्वधर्म' है उसी काल में उसमें 'पट-नास्तित्व' अथवा 'अवक्तव्यत्वादि' भी धर्म हैं। इसलिए घट में इन सब अस्तियों की एक समय ही स्थिति है, अर्थात् कालद्वारा अभेद स्थिति है। दूसरे शब्दोंमें कालिक सम्बन्ध से सब धर्म अभिन्न हैं, क्योंकि समानकाल में ही सब धर्म विद्यमान हैं।

२ आत्मरूप ।

जैसे घट अस्तित्वका स्वरूप है वैसे ही वह और धर्मोंका भी स्वरूप है; अर्थात् अस्तित्व ही एक गुण नहीं उसमें और गुण भी हैं । धर्म जिस स्वरूप से वस्तु में रहते हैं वही उनका निज का रूप अथवा आत्मरूप है । इस प्रकार एक घटरूप अधिकरण में आत्मस्वरूप से सब धर्म रहते हैं, इसलिए आत्मस्वरूप के कारण सब धर्मोंकी अभेदवृत्ति (स्थिति) हुई ।

३ अर्थ ।

जो घटरूप द्रव्य पदार्थ के अस्तित्वधर्म का आधार है वही घट द्रव्य अन्य धर्मों का भी आधार है । इस प्रकार एक आधार में अर्थात् एक ही पदार्थ में सब धर्मों की स्थिति अर्थ से अभेदवृत्ति है ।

४ सम्बन्ध ।

जो 'शायद' सम्बन्ध अभेदरूप अस्तित्वका घट

के साथ है वही 'शायद' सम्बन्ध रूप आदि अन्य सब धर्मोंका भी घट के साथ है। यह सम्बन्धकी अभेद-वृत्ति है।

५ उपकार।

जो अपने स्वरूपमय वस्तु को करना उपकार, अस्तित्वका घट के साथ है वहीं अपना वैशिष्ट्य सम्पादन उपकार अन्य धर्मों का भी है। यह उप-कार में अभेदवृत्ति है।

६ गुणिदेश।

घटके जिस देश में अपने रूप (अपेक्षा) से अस्तित्व धर्म है, उसी देश में अन्यकी अपेक्षा से नास्तित्व आदि सम्पूर्ण धर्म भी हैं, इसलिए देशभेद भी नहीं है।

७ संसर्ग।

जिस प्रकार एक वस्तुत्व स्वरूप से आस्तित्व का घट में संसर्ग है, वैसे ही एक वस्तुत्व रूपसे अन्य

सब धर्मों का भी संसर्ग है, इस लिऐ संसर्ग से अभेद-वृत्ति हुई।

८ शब्द ।

जो 'अस्ति' शब्द आस्तित्वधर्म स्वरूप घट आदि वस्तु का भी वाचक है उसी वाच्यत्वरूप शब्द से सब धर्मों की घट आदि पदार्थों में अभेदवृत्ति है। इस प्रकार सब धर्मों की अभेदरूप से घट में स्थिति रहती है। इस रीति से द्रव्यार्थिक नय की प्रधानता से वस्तु में सब धर्मों की अभेदरूप से स्थिति रहती है और पर्यायार्थिक नय की प्रधानता से यह स्थिति अभेदोपचारके रूप से रहती है। इन दोनों के द्वारा अनेकान्तवाद की सूचना होती है।

३–जैसे वस्तु में धर्मों की स्थिति आठ प्रकार से रहती है, वैसे ही किसी वस्तुका निजरूप चार प्रकार से होता है। वे चार प्रकार ये हैं–नाम स्थापनाद्रव्य और भाव। जैसे, मृत्तिका से कितनी ही वस्तुयें बनी

हैं परन्तु घट नाम एक का ही है। घट जिस स्थान में रक्खा है वह उसका क्षेत्र है, जैसे घट एक पत्थर पर रक्खा है, तो पत्थर उसका क्षेत्र है। दूसरा पत्थर अथवा तख्ता जहां वह नहीं रक्खा है वह उसका 'परक्षेत्र' है। यह स्थापना है। घट में मृत्तिका द्रव्य है, सुवर्ण द्रव्य नहीं है। यह द्रव्य है। घट जिस काल मे है वह उसका भाव है। यह वर्तमानकाल ही होसकता है, भूत अथवा भविष्यत् काल नहीं।

सारांश यह है कि वस्तुका निजरूप जानने के लिए उसे इन चार बातों से देखना चाहिए, अर्थात् उस वस्तुका नाम, उसकी स्थापना (क्षेत्र), उसका द्रव्य और उसका भाव अर्थात् काल।

उदाहरण—घटका नाम घट है, कूंडी-नांदी आदि का नहीं। ये उसके परिणाम हैं। घटकी स्थापना वही क्षेत्र है जहां वह धरा है, दूसरा क्षेत्र नहीं।

घटका द्रव्य मृत्तिका है, सुवर्ण नहीं। घट का काल वर्तमान है, भूत भविष्यत् नहीं। घटकी मृत्तिकादि उसका द्रव्यरूप अर्थात् निजरूप है और मृत्तिका से जो सैंकड़ों चीजें बनती हैं जैसे कूंडी-मटकना-नांदी आदि ये उसके पर्य्यायरूप हैं। प्रत्येक वाक्यका स्पष्ट विवरण इस प्रकार है :—

१-शायद घट है। इसका यह अर्थ है कि घट अपने निजरूप मे है, अर्थात् नाम, स्थापना (क्षेत्र) द्रव्य और भाव (काल) से है। टेढ़ी गर्दन रूप से घटका नाम है। इसकी द्रव्य मृत्तिका है। इसका क्षेत्र वह स्थान है जहां वह धरा है और इसका काल वह समय है जिसमें वह वर्तमान है। इन चीजों के देखते घट है। "शायद" इस लिए कहा कि कोई यह न समझे कि घट में केवल ये ही चीजें हैं जो प्रधानता से बताई हैं और कुछ नहीं है। यह अनेकान्तार्थवाचक है। इस वाक्य में सत्ता प्रधान है।

२–शायद घट नहीं है। इसका यह अर्थ है कि घट परनाम, पररूप, परद्रव्य, परक्षेत्र (स्थापना) और परकाल (भाव) में नहीं है। अपना रूप तो टेढ़ी गर्दन थी, लेकिन इस रूप से अलग जो रूप हैं जैसे चपटा लंबा आदि, वह इस मे नहीं है। जैसे पट वृक्षादिका रूप। अपनी द्रव्यता मृत्तिका है, लेकिन परद्रव्य सुवर्ण लोहा पत्थर सूत, ये नहीं हैं। अपना क्षेत्र तो वह स्थान था जहां वह रक्खा था यानी पटा या पत्थर, दूसरा स्थान पृथिवी छत आदि। अपना काल तो वर्तमान था दूसरा काल भूत या भविष्यत् काल है। इसमें असत्ता प्रधान है। परन्तु कोई यह न समझे कि इसमे घटका निषेध है। नहीं कहने से घटका अस्तित्व बिलकुल चला नहीं गया, बल्कि गौण होगया और परस्वरूप की प्रधानता होगई। यह वाक्य पहले वाक्यका निषेध रूप से विरुद्ध नहीं है, बल्कि असत्ता इस में प्रधान है और सत्ता गौण।

३-शायद घट है और नहीं भी है। पहले घट के निजरूपकी सत्ता प्रधान होने से उसका होना बताया है और फिर घटके परस्वरूप की असत्ता प्रधान होने से उसका नहीं होना बताया है। जब घटके निजरूप की तरफ देखो तो वह है और उसके पररूपकी तरफ देखो तो नहीं है।

४-शायद घट अवक्तव्य है। अर्थात ऐसा है जिसके विषय में कुछ कह नहीं सकते हैं। एक ही समय में घटके निजरूपकी सत्ता और उसके पर रूपकी असत्ता प्रधान करने से वह अवक्तव्य हो जाता है। ऐसी वस्तु जो एक ही समय में अपने निजरूप और पररूपकी प्रधानता रखती है वह सिवा अवक्तव्य के और क्या होसकती है ?

५-शायद घट है और अवक्तव्य भी है। द्रव्य रूप से तो घट है, लेकिन उसका द्रव्य और पर्याय रूप एक कालमें ही प्रधानभूत नहीं है। सत्तासहित अवक्तव्यता की प्रधानता है। घटके द्रव्य अर्थात

मृत्तिका रूपको देखें तो घट है, परन्तु द्रव्य (मृत्तिका) और उसके परिवर्तनशील रूप दोनों को एक समय में ही देखें तो वह अवक्तव्य है।

६–शायद घट नहीं है और अवक्तव्य भी है। घट अपने पर्य्यायरूपकी अपेक्षा से नहीं है, क्योंकि वे रूप क्षणक्षण में बदलते रहते हैं, लेकिन प्रधानभूत द्रव्य पार्य्याय उभय की अपेक्षा से वह अवक्तव्यत्व का आधार है। इसमें असत्तारहित अवक्तव्यत्व की प्रधानता है।

७–शायद घट है, नहीं भी है और अवक्तव्य भी है। द्रव्य पर्य्याय अलग अलग की अपेक्षा से सत्ता असत्ता सहित मिलित तथा साथ ही योजित द्रव्य पर्य्याय की अपेक्षा से अवक्तव्यत्व का आश्रय घट है। मृत्तिका की दृष्टि से 'है,' उसके क्षणक्षण में रूप बदलते हैं इस पर्य्यायदृष्टि से 'नहीं' है। इन दोनों को एक साथ देखो तो 'अवक्तव्य' है।

इस सब का अभिप्राय यह है कि जब किसी वस्तु का निर्णय करना है तो उसे केवल एक दृष्टि से ही देखकर व्यवस्था नहीं देनी चाहिए। प्रत्येक वस्तु में अनेक धर्म होते हैं। इन सभी धर्मोंको देखना चाहिए। जैनशास्त्र का मत है कि प्रत्येक वस्तु सात दृष्टियों से देखी जा सकती है। इनमें से हरएक दृष्टि सत्य है; परन्तु पूरा ज्ञान तभी होसकता है जब ये सातों दृष्टियां मिलाई जायें। इस प्रकार किसी वस्तु के विषय में व्यवस्था देना जैनशास्त्र का अद्भुत गंभीर गवेषणापूर्ण और विलक्षण सिद्धान्त है।

जिस तरह प्रत्येक वस्तु में 'अस्ति' लगा कर वाक्य बनाते हैं, उसी तरह नित्य अनित्य एक अनेक शब्द भी लगाते हैं। सप्तभङ्गी का निरूपण नित्यत्व अनित्यत्व एकत्व और अनेकत्व आदि धर्मों से भी करना चाहिये। जैसे शायद घट नित्य (द्रव्यरूप से) शायद अनित्य है (पर्य्यायरूप से), इसी तरह एकत्व और अनेकत्व रूप से शायद घट एक है शायद घट

अनेक है। द्रव्यरूप से तो एक है क्योंकि मृत्तिकारूप द्रव्य एक है और सामान्य है और पर्य्याय रूप से अनेक है, क्योंकि रस गन्ध आदि अनेक पर्य्याय रूप है।

एकान्त और अनेकान्त।

एकान्त दो प्रकार है अर्थात् सम्यक् और मिथ्या इसी तरह अनेकान्त भी दो प्रकार का है। एक पदार्थ में अनेक धर्म होते हैं। इनमें से किसी एक धर्म को प्रधान कर कहा जाय और दूसरे धर्मों का निषेध नहीं किया जाय तो सम्यक् एकान्त है। यदि किसी एक धर्म का निश्चय कर उस पदार्थ के और सब धर्मोंका निषेध किया जाय तो वह मिथ्या एकान्त है।

प्रत्यक्ष अनुमान और-आगम प्रमाणों से अविरुद्ध एक वस्तु में अनेक धर्मों का-निरूपण करना सम्यक् अनेकान्त है। प्रत्यक्षादि प्रमाणों से विरुद्ध एक वस्त में अनेक धर्मों की कल्पना करना मिथ्या

सम्यक् एकान्त तो नय है और मिथ्या एकान्त नया भास है। ऐसेही सम्यक् अनेकान्त तो प्रमाण है और मिथ्या अनेकान्त प्रमाणाभास है जैनशास्त्र सम्यक् एकान्त और सम्यक् अनेकान्त को मानता है और मिथ्या एकान्त और मिथ्या अनेकान्त को नहीं। सप्तभङ्गिनय में सम्यक् एकांत और सम्यक् अनेकान्त दोनों मिले हैं। इसका पहला वाक्य एकान्तकी अपेक्षा से है। दूसरा अनेकान्त की अपेक्षा से, तीसरा दोनों की अपेक्षा–चौथा एकान्त और अनेकान्त की एक काल में योजना की अपेक्षा से, पांचवां एकान्त और अभयवाद की एक काल में योजना की अपेक्षा से। छठा अनेकान्त और उभयवाद की एक काल की योजना की अपेक्षा से और सातवां एकान्त और अनेकान्त और उभयवाद की एक काल में योजना की अपेक्षा से है।

यह नय केवल अनेकान्त अनेकान्त ही नहीं है, बल्कि एकान्त भी इस में मिला है। यदि एकान्त

का अभाव हो तो एकान्तके समूह भूत अनेकान्तका भी अभाव हो जाय। जैसे शाखाओं का अभाव हो जाय तो शाखा समूहभूत वृक्षका भी अभाव हो जायगा। इस नयमें मूलभूत भङ्ग पहले के दो वाक्य 'अस्ति' और 'नास्ति' हैं। आगे के ३ से ७ तक वाक्य इनही की योजना से होते हैं।

जैनमत के सिवा और मतवाले किसी न किसी तत्त्व को प्रधान मानकर केवल एकान्तवादी ही हैं। अतः उनका पक्ष कमजोर होजाता है। जैनमत सम्यक् एकान्त को लिये हुए सम्यक् अनेकान्तवादी है। इस लिए इसका पक्ष बड़ा बलिष्ठ और सर्वव्यापक है। केवल एकन्तवाद मानने से जो दोष आते हैं उन्हें कुछ दूसरे शास्त्रों के सिद्धान्त से दिखाते हैं।

१ सांख्यशास्त्र तत्त्व को द्रव्य ही मानता है, उसकी पर्य्याय नहीं इस लिए, उसकी दृष्टि से इस नय का एक ही भङ्ग सत्य है। परन्तु पर्य्याय भी अनुभव सिद्ध है, इस लिए यह मत ठीक नहीं।

२ पर्य्याय ही तत्त्व है। हर एक पदार्थ क्षण क्षण में वदलता रहता है. इस लिए क्षणिक पर्य्याय ही तत्त्व है, कोई मुख्य द्रव्य तत्त्व नहीं है। यह वौद्ध मानते हैं। इनकी दृष्टि से दूसरा ही भङ्ग ठीक है। परन्तु घटादि पर्य्यायों में मृत्तिकारूप द्रव्य और कटक कुण्डल आदि में सुवर्ण द्रव्य भी अनुभवसिद्ध है। इस लिए इनका मत भी ठीक नहीं है।

३ जो यह कहते हैं कि वस्तु सर्वथा अवक्तव्य रूप ही है। उनमें निज वचन का विरोध है। क्योंकि अवक्तव्य इस शब्द से वे वस्तु को कहते हैं तो सर्वथा अवक्तव्यता कहां रही ? जैसे कोई कहे कि मैं सदा मौन व्रत धारण करता हूं यदि सदा मौन है तो 'मैं मौन हूं' यह वाक्य कैसे कहा ?

इस लिए केवल तीसरा भंग भी ठीक नहीं है। इसी तरह और और मत भी समझो। अव अनेकान्त

वाद में जो शंकायें दूसरे मतावलम्बी विद्वानोंने उठाई हैं, उनका निवारण लिखते हैं।

किसी ने कहा है कि अनेकान्तवाद छलमात्र है, पर यह बात नहीं है। अनेकान्तवाद छलमात्र इस लिए नहीं है कि छलयोजना में एक ही शब्द के दो अर्थ होते हैं। जैसे "नवकम्बलोऽयं देवदत्तः" यहां नव के दो अर्थ हैं-१. नया और २ नौ, अर्थात् देवदत्त के पास नया कम्बल है और देवदत्त के पास नौ कम्बल हैं। यह बात अनेकान्तवाद में नहीं है। एक पदार्थ को एक दृष्टि से देखने से उसका होना बताना और दूसरी दृष्टि से देखने से उसका नहीं होना बताना, एक शब्द के दो अर्थ नहीं हुए। इसलिए यह छल नहीं हुआ।

अनेकान्तवाद संशय का हेतु भी नहीं है। संशय होने में सामान्य अशंका प्रत्यक्ष, विशेष अशंका अप्रत्यक्ष, और विशेष की स्मृति होना आवश्यक है।

जैसे कुछ प्रकाश और कुछ अन्धकार होने के समय मनुष्यों के समान स्थित खंभ को देखकर, लेकिन उसके और विशेष अंशों को नहीं देखकर (जैसे उस में पक्षियों के घोंसले अथवा मनुष्य के हाथ पैर वस्त्र शिखा आदि) और मनुष्य के और अंशों को याद कर उस में मनुष्य का भ्रम करना। परन्तु यह बात अनेकान्तवाद में नहीं है। क्योंकि स्वरूप पर रूप विशेषों की उपलब्धि प्रत्येक पदार्थ में है। इस लिए विशेष की उपलब्धि से अनेकान्तवाद संशय का हेतु नहीं है। अनेकान्तवाद मे आठ विरोध दोष भी नहीं है। वे आठ दोष ये है—१ विरोध, २ वैयधिकरण्य, ३ अनवस्था, ४ संकर, ५ व्यतिकर, ६ संशय, ७ अप्रातिपत्ति और ८ अभाव।

शंका १—अस्ति नास्ति एक पदार्थ में विरोध दोष है।

उत्तर—विरोधका साधक अभाव है। जैसे एक वस्तु में घटत्व और पटत्व दोनों विरोधी हैं, परन्तु द्रव्य

को छोड़ दिया जाय और केवल उस वस्तु के रूप ही देखे जाय तो इन रूपों में विरोध नहीं है। द्रव्य की दृष्टि से वस्तु की सत्ता है, परन्तु रूपों में विरोध है। इस तरह एक वस्तु में भाव अभाव दोनों हो सकते हैं। निजरूप से भाव और पररूप से अभाव।

शंका २-अस्ति नास्तिका एक पदार्थ में होना एक अधिकरण में होना है। इस लिए यह दोष है। दो अधिकरण होने चाहिए थे।

उत्तर-एक वृक्ष अधिकरण में चल और अचल दोनों धर्म हैं। एक वस्तु में रक्त श्याम पीला कई रंग हो सकते हैं। इसी प्रकार अनेकान्तवाद है।

३ शंका-जो अप्रमाणिक पदार्थों की परंपरा से कल्पना है उस कल्पना के विश्राम के अभाव को ही अनवस्था कहते हैं। अस्ति एक रूप से है नास्ति

पररूप से है। दोनों एक रूप मे होने चाहिए, नहीं तो यह दोप आता है।

उत्तर—अनेक धर्मस्वरूप वस्तु पहले ही सिद्ध हो चुकी है। फिर कहेन की आवश्यकता नहीं। यहां अप्रमाणिक पदार्थों की परंपरा की कल्पना का सर्वथा अभाव है।

४ शंका—एक काल में ही एक वस्तु में सब धर्मों की व्याप्ति संकर दोप है, और वह इसमें है।

उत्तर—अनुभव सिद्ध पदार्थ सिद्ध होने पर किसी भी दोप का अवकाश नहीं है। जब पदार्थ की सिद्धि अनुभव से विरुद्ध होती है वह तभी इस दोष का विषय होता है।

५ शंका—परस्पर विषयगमनको व्यतिकर कहेत हैं। जैसे जिस रूप से सत्व है उस रूप से असत्त्व भी रहेगा न कि सत्त्व, और जिस रूप से असत्व है, उसी रूप से सत्व रहेगा, न कि असत्त्व इसलिए व्यतिकर दोष है।

उत्तर६–स्वरूपसे सत्त्व और पररूपसे असत्त्व अनुभवसिद्ध होनेसे संकर तथा व्यतिकर दोष नहीं है।

शंका ६–एक ही वस्तु सत्त्व असत्त्व उभय रूप होनेसे यह निश्चय करना अशक्य है कि यह क्या है। इस लिए संशय है।

उत्तर–संशयका निवारण पहले ही कर आये हैं।

शंका ७–संशय होने मे बोधका अभाव है,इसलिए अप्रतिपत्ति दोष है।

उत्तर–जब संशय नहीं है तो वस्तुके बोध का अभाव कैसा ? इस लिए अप्रतिपत्ति दोष नहीं है।

शंका ८ अप्रतिपत्ति होनेसे सत्त्व असत्त्व स्वरूप वस्तुका ही अभाव भान होता है, इसलिए अभाव दोष है।

उत्तर जब अप्रतिपत्ति दोष ही नहीं है तो अभाव कैसा। क्योंकि अप्रतिपत्ति होनेसे ही सत्त्व असत्त्व स्वरूप वस्तुका अभाव भान होता है।

अब यह दिखाते हैं कि दूसरे शास्त्रोंके भी मत वास्तवमें अनेकान्तवाद ही हैं, एकान्तवाद नहीं, जैसा कि वे मानते हैं ।

सांख्य

सत्त्व-रजस्- तमोगुणोंकी साम्यावस्थाको प्रधान (प्रकृति) कहते हैं । लाघव—शोष-ताप वाराण भिन्न२ स्वभाववाले अनेक स्वरूप पदार्थोंका एक प्रधान स्वरूप स्वीकार करनेहीसे एक अनेक स्वरूप पदार्थ स्वीकृत हो चुका । एक पदार्थ है (प्रकृति), लेकिन स्वरूप उसके अनेक है । तीनो गुणोंका समूह ही प्रधान है, तथापि एक वस्तु अनेकात्मक स्वीकार करना अखण्डित है ।

नैयायिक

द्रव्यादि पदार्थोंको सामान्य विशेषरूप स्वीकार करते हैं । अनेकमें एक व्यापक नियम होनेसे सामान्य और जो अन्य पदार्थोंसे एकको पृथक् करे वह विशेष

है। जैसे गुण द्रव्य नहीं है, कर्म द्रव्य नहीं है। एकहीको सामान्य विशेष माना है। ऐसे ही गुणत्व कर्मत्व भी सामान्य विशेष रूप है।

बौद्ध

मेचक मणिके ज्ञानको एक और अनेक मानते हैं। पाँच रंगरूप रत्नको मेचक कहते हैं। इसका ज्ञान एक प्रतिभासरूप नहीं है। एक ज्ञानभी नहीं है और अनेकभी नहीं बल्कि एक पदार्थके नाना धर्म हैं जिसने अनेकान्त और एकान्त दोनों मिलवाँ (मिश्र) ज्ञान होता है।

चार्वाकादि

पृथवी, जल तेज वायु चार तत्त्वोंसे चैतन्य बना मानते हैं। जैसे कोद्रव आदिसे मादक शक्ति। उनका सिद्धान्त है कि पृथवी आदि अनेक स्वरूप एक ही चैतन्य है। इसलिए यह भी एकान्त अनेकान्तवाद हुआ।

मीमांसक

प्रमाता प्रमीति प्रमेयाकार एक ही ज्ञान होता है। घटको मैं जानता हूँ— इसमें अनेकपदार्थ विषयतासहित एक ही ज्ञान स्वीकार किया है। यह भी अनेकान्त-वाद ही हुआ।

इस छोटेसे लेखमें इस गम्भीर नयका विवरण करनेकी चेष्टा की है; परन्तु यह विषय तो स्पष्टता से एक बृहदाकार पुस्तकमें ही वर्णन हो सकता है। इस लिए यदि यह लेख स्पष्ट नहीं है तो पाठक क्षमा करें। विषय बहुत गम्भीर है।

कन्नोमल एम० ए०

श्रीआत्मानन्द जैन ट्रैक्ट सोसायटी, अंबाला शहर
की

नियमावली।

१-इस सोसायटी का मेम्बर हरएक होसकता है।

२-मेम्बर होने की फीस कमसे कम एक रुपया वार्षिक है, अधिक देने का हर एक को अधिकार है। फीस अगाऊ ली जायगी।

३-इस सोसायटीका वर्ष ता० १ जनवरी से प्रारंभ होता है। जो महाशय मेम्बर होंगे वे चाहे किसी महीने में मेम्बर बने हों किन्तु चन्दा उन से ता० १ जनवरी से ता० ३१ दिसम्बर तक का लिया जायगा।

४-जो महाशय अपने खर्च से कोई ट्रैक्ट इस सोसायटी द्वारा प्रकाशित कराकर विना मूल्य वितीर्ण कराना चाहे, उनका नाम ट्रैक्ट पर छपवाया जायगा।

५-जो ट्रैक्ट, यह सोसायटी छपवाया करेगी वे हरएक मेम्बर के पास विना मूल्य भेजे जाया करेंगे।

विनीत—

चिरंजीलाल